श्रीत्रिपुराम्बाशाम्भवीमहाप्रपत्तिः

(संस्कृत पाठ एवं हिंदी व्याख्या युक्त)

श्रीमन्महामहिम विद्यामार्तण्ड श्रीभागवतानंद गुरु

★★ ॐ ★★

याकाशे निगमादिवाग्सुनमिता सृष्ट्यादिहेतुप्रभा, ब्रह्माविष्णुमहेश्वरेश्वरसदाशैवासने संस्थिता।

योगिन्यादिगणौघसेवितपदां ब्रह्माक्षराभ्यन्तरां, श्रीविद्यामहिमाल्यभूषणयुतामोंकारतत्वां नुमः ॥१॥

जो प्रकाशपुंज में स्थित वेदादि के वचनों द्वारा प्रणाम की गई हैं, पञ्चमहाप्रेत (ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर एवं सदाशिव) के आसन पर विराजमान हैं, योगिनी आदि के गणों के समूहों के द्वारा जिनके चरणों की सेवा की गई है, ऐसी नागरूपी माला से अलंकृत, ॐकार तत्व की स्वामिनी श्रीविद्या को हम प्रणाम करते हैं।

भोगैश्वर्यप्रदानसंगतिरतां पुष्पेक्षुकोदण्डकां, विद्याक्षाभययोगमार्गजननीं रुद्रांकभागे गताम्।

चन्द्रार्धान्कितहैममस्तकमहामाणिक्यदेहोज्ज्वलां, श्रीविद्यां त्रिपुराम्बिकामभयदामद्वैतवीर्यां नुमः ॥२॥

जो भोग एवं ऐश्वर्य को प्रदान करने के स्वभाव वाली हैं, जो पुष्प एवं ईख के बने धनुष को धारण करती हैं, जो विद्या का ज्ञान कराने वाले अभयसंज्ञक योगमार्ग को उत्पन्न करती हैं, एवं रुद्र के अंक में स्थित हैं, स्वर्ण के समान आभा वाले जिनके मस्तक में अर्द्धचन्द्र सुशोभित हैं तथा महान् माणिक्य के समान जिनके शरीर की रक्ताभा है, जो सभी लोकों की माता हैं, साधक को अभयदान देने वाली हैं, जिनके पराक्रम की तुलना किसी से नहीं हैं, उन श्रीविद्या को हम प्रणाम करते हैं।

अर्देत सूक्ष्मपथगम्यमहात्मभावमासक्तिदोषगतगोष्ठिचिति त्रपेध्वम्।

निष्कृष्टदेविचरणामृतनैत्यलाभे, व्रज्यास्त कां निवशदां शरणं मनुष्याः ॥३॥

हे मनुष्यों ! सूक्ष्म मार्ग के द्वारा जिस महान् आत्मबोध के भाव की प्राप्ति होती है, उसकी याचना करो। अपने अंदर आसक्ति आदि दोष की संगति का बोध होने पर लज्जा के भाव से युक्त बनो। अभी जो श्रीदेवी के चरणामृत का नित्य लाभ मिल रहा है, जब उससे वंचित कर दिए जाओगे, तब किस विशिष्ट अभीष्ट की सिद्धि कराने वाली के शरण में तुम्हें जाना चाहिये ? (अर्थात्, देविकृपा से वंचितों के लिये कोई भी स्थान शरण हेतु उपयुक्त नहीं बचेगा)।

ह्रोषीमहीत्थमधुना निजपापबुद्धिं, सत्संगमेन बिभियाम कुमार्गसंगात्।

प्राखर्यजन्यमुपदानमलोलबुद्ध्या, प्रालेयसंघ इव आतपचण्डकाले ॥४॥

हम, सत्पुरुषों की संगति के द्वारा (प्रेरित होकर) कुमार्ग के संग से डरें और दुष्टता की भावना से जन्य दुराचार हेतु उत्कोच (रिश्वत) रूपी प्रलोभन को दृढ़ मति से, साथ ही अपनी पापबुद्धि को, अब इस प्रकार से छिपा लें जैसे भीषण गर्मी के समय हिमखंड छिप जाते हैं (नष्ट हो जाते हैं या दृष्टिगोचर नहीं होते)।

प्रस्थम्पचोऽपि नितरां तव मोहकास्त्रैस्पर्वन् कुनिच्छिविविहारबलिष्णुबस्तः।

बल्यौ तवाङ्घ्रिकमलावपि चारुहासे, त्वत्प्रेमवञ्चितजनाय बलिन्दमाय ॥५॥

कठोर व्रत का पालन करने वाले वानप्रस्थी तपस्वी भी तुम्हारे मोहक मायामय अस्त्रों के द्वारा बकरे के समान मोहित होकर पतित वर्णसंकरों के संसर्ग में पड़कर अपमानित गति को प्राप्त हो जाते हैं। हे मनोहर मुस्कान वाली देवि ! जो जन तुम्हारी प्रेमपूर्णता से वञ्चित हैं, वे यदि विष्णु के समान भी बलिष्ठ हों तो भी उनके लिए तुम्हारे चरणकमलों की शक्ति अधिक ही हैं (अर्थात्, तुम्हारी माया को वे नहीं जीत सकते)।

भौवादिकान्तनिधनो ह्यमुनिव्रतो यः, प्राप्तुं हिरण्यमनुमीवति सन्तलोकम्।

मुस्तन्तमेव मुहिरं तव वासनान्यो, सम्यग्ददाति मतिमान् स मुखम्पचः स्यात् ॥६॥

भौतिक सुखों की लालसा में प्राण त्याग देने वाले असंयमी जन जब धनादि के लोभ से महात्माजनों के पास जाते हैं, उस समय उस संग्रहपरायण मूर्ख को जो तुम्हारे मन्दिरों का पता बता देता है, वह बुद्धिमान् ही सच्चा साधु है (अर्थात्, श्रीदेवी के मन्दिर में उपासना करने वाले को भोग के साथ साथ मोक्ष भी मिलता है, इसी उभयलाभ की कामना मतिमान् करते हैं)।

देहम्भराप्लुतधरातलभागमध्ये, संचिन्तकैर्मधुरकामिनीदेहभागान्।

त्वां नान्तरीयकमतेन भजन्ति लोके, को सम्भवेदधिकभाग्ययुतो महेशि ! ॥७॥

सुंदर स्त्रियों के शरीर का चिंतन करने वाले, मात्र उदरपोषण हेतु जीवन धारण करने वालों से भरी इस पृथ्वी में जो अनन्यभाव से आपकी आराधना करते हैं, हे महेशि ! उनसे अधिक भाग्यवान् और कौन होगा ?

यद्रावयन्ति तव नामयशोनुरक्तास्तृण्वन्ति किञ्चिदपि शुष्कमशुष्कमेव।

सुन्वन्ति यत्तवमुखेन्दुनिमग्नचित्ता, वेदार्थदेवरसजह्नुसुतासमानाः ॥८॥

तुम्हारे नाम और यश के गायन में जो अनुरक्त हैं, उनके मुख से कुछ भी शब्द निकल जाए, वो मधुर या रूखा कुछ भी चख लें, आपके मुखचन्द्र के ध्यान में जिनका चित्त मग्न रहता है, उनके शरीर से कोई भी जल स्पर्श कर जाए, वे (शब्द, भोजन तथा जल, क्रमशः) वेदार्थ के समान (गूढ़), अमृत के समान (मधुर) एवं गंगाजल के समान (पवित्र) हो जाते हैं।

प्रत्युक्रमेण परिरम्भक्रियानुरक्ता, संस्थावसंस्थितनृदेवसमूहमुख्याः।

याभिर्विशाथप्रतिशासितयोगव्यासास्ता वै मृगेन्द्रकटयस्तवपाददास्यः ॥९॥

जिनकी सुंदरता इतनी तीव्र है कि यज्ञमण्डप के स्तुति स्थान में दीक्षित होकर खड़े ऋत्विक्समूह के प्रधान भी अत्यंत बलपूर्वक उनके आलिंगन की कामना और क्रिया में अनुरक्त हो जाते हैं, जिनके द्वारा बड़े बड़े योगविस्तारक साधक भी मोहित होकर उनके द्वारपाल आदि के रूप में सेवक बनकर रहने लगते हैं, वे सिंह के समान सूक्ष्मकटिभाग वाली कामिनियां भी तुम्हारे चरणों की दासी ही बन कर रह जाती हैं।

ग्रामे वनेऽचलयुतान्तरदेवखाते, कुञ्जेऽथवायतनप्रस्रवणेषु देवि ! ।

श्रीशाम्भवीति भुवनेश्वरि जीवकाले, आकारयन्नियुतधा त्रिपुराम्बिकेति ॥१० ॥

गांव में, वन में, पर्वतों में स्थित गुफाओं में, उपवनों में, मंदिर अथवा झरनों के समीप, मैं जहां भी जब तक जीवित रहूं तब तक लाखों बार हे भुवनेश्वरि ! श्रीशाम्भवी, त्रिपुराम्बिके, इस प्रकार से तुम्हें पुकारता रहूं।

नो चेत्कथञ्चन निमीलनकालमात्रे, निम्लोचकालसमये परिपोटकेन।

त्वन्नामकीर्तनपरान्न शृणोति किञ्चित्, किं जीवितेन सफलं खलु तस्य लोके ? ॥११ ॥

जिसने अपने जीवन के अन्तकाल में भी किसी भी प्रकार से, कर्णादि में उत्पन्न रोग के कारण पलक झपकने भर के समय के लिए भी, तुम्हारे नामसंकीर्तन में मग्न लोगों की वाणी को थोड़ा भी नहीं सुना, इस संसार में उसके जीवित रहने का क्या साफल्य हुआ ?

यस्यैकवर्णशुभवाचनमष्टसिद्धी, सम्प्राप्यते न वदतीह निषद्वरेशि ! ।

निर्मृष्टचिंतननिशुम्भनिशीथजीवो, पाप्मा समस्तजगतीव प्रमुग्धबुद्धिः ॥१२ ॥

जिस नाम के एक वर्ण के भी अच्छी प्रकार से उच्चारण करने पर अष्टसिद्धियों की प्राप्ति होती है, फिर भी जो व्यक्ति उसका उच्चारण नहीं करता, हे कामेश्वरि ! शुद्ध चिन्तनशीलता को नष्ट करने वाला वह, मोहित बुद्धि वाले उल्लू के समान व्यक्ति, पूरे संसार में सबसे बड़ा पापी है।

व्रीड्यन्तु माहिविकधर्मप्रपन्नसंस्थाः, मोक्षानुरक्तसुजनारिकुयोगवाहः ।

सोत्प्रासदृश्यमवलोकयति कृतान्तस्तिष्ठन् तिलित्सविथुरेश उदात्तदण्डः ॥१३ ॥

व्याभिचारिक वृत्तियों का जिन्होंने आश्रय ले रखा है, जो दुष्ट जन मोक्ष के मार्ग पर चलने वाले सज्जनों के शत्रु हैं तथा पापियों का भरण पोषण करते हैं, उन्हें लज्जा आनी चाहिए क्योंकि क्रूर राक्षस के समान विशालकाय कालसर्प कालदण्ड को उठाये हुए खड़ा रहकर उन दुष्टों के द्वारा किये गए उपहास एवं व्यंग्यात्मक व्यवहार को देख देख कर हंसता रहता है।

दिव्यावदानतनुलाकृतिसृष्टिकर्त्री, स्थूला परा किमपि सूक्ष्मगता विभाज्या।

त्रैगुण्यसाम्यपरिणामविसर्गभूता, ज्ञानक्रियाजड़निमित्तविशेषणेन ॥१४ ॥

आप दिव्य शक्ति से युक्त होकर विस्तृत सृष्टि की रचना करने वाली हैं, जो स्थूलावस्था, परावस्था एवं कहीं कहीं सूक्ष्मावस्था में विभाजित है। ज्ञान, क्रिया एवं जड़ आदि विशेषणों से युक्त (सात्विक, राजस एवं तामस) त्रिगुणों की साम्यावस्था के परिणामस्वरूप आप सृष्टि से परे स्वरूप में स्थित रहती हैं। (सर्ग सृष्टि का वाचक है तथा इसके विपरीतार्थ में विसर्ग शब्द का प्रयोग होता है। दर्शनशास्त्र के अनुसार तीनों गुणों की साम्यावस्था में किसी प्रकार की कोई उत्पत्ति नहीं होती है किंतु जब इनकी वैषम्यावस्था होती है, तो सृष्टि होती है। त्रिगुणों की साम्यावस्था

मूलप्रकृति है तथा वैषम्यावस्था सृष्टि है। श्रीमद्भगवद्गीता में भी गुणों एवं विकारों को प्रकृतिजन्य ही कहा गया है :- विकारांश्च गुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसम्भवान्। तीनों गुणों में सत्वगुण ज्ञानप्रधान, रजोगुण क्रियाप्रधान एवं तमोगुण जड़प्रधान है जिनके वैषम्य से ही सांसारिक उद्बोधों का बोध होता है)।

षट्चक्रराजगतबिंदुकलात्मरूपा, स्थित्यात्मिका शरधनुःसृणिपाशहस्ता।

अंतर्बहिस्थितरथाङ्गदशाभिधेशी, एते तवाभिजनवागभिधायकास्ते ॥१५॥

मूलाधार आदि छः चक्रों के राजा (सहस्रार) में बिंदुभावस्थित सूक्ष्मरूप मूर्त्यात्मक कलारूपा, स्थूलावस्था में जब परा शक्ति प्रपञ्च रूपता को प्राप्त करके स्थूलरूप को धारण करती है, उस रूप में स्थित्यात्मिका, पुनः स्थूलावस्था को प्राप्त परा शक्ति के बाण, धनुष, अङ्कुश एवं पाशात्मक नित्यायुधों से युक्त चतुर्भुजा, अन्तःस्थित चक्रों के साथ साथ दशनामों वाले श्रीचक्रस्थित बहिश्चक्रों की स्वामिनी, ये तुम्हारे साधकों की वाणी से निकले तुम्हारे प्रति सम्बोधन हैं (अर्थात्, ये तुम्हारे विशिष्ट नाम हैं)।

शक्ती तवावरणचिह्नगता सुकेशि ! सत्यप्रवाहपरिरोधनकार्यदक्षा।

अन्यां कुमोहजननीति वदन्ति गावः, विक्षेपिका इतररूपधराघवीर्या ॥१६॥

हे सुंदर केशों वाली देवि ! तुम्हारी दो शक्तियां प्रसिद्ध हैं। उनमें प्रथम तो आवरण के लक्षणों से युक्त है जो साधक की बुद्धि का आच्छादन करके उसके सत्यबोध में बाधक बन जाती है। दूसरी को वेदोक्तियां कुमोह की जननी बताती हैं, जिसे विक्षेप कहते हैं। विक्षेप शक्ति सत्य के वास्तविक स्वरूप को प्रकट न करके पापसमूह के द्वारा बली होकर कुछ और ही भ्रामक तत्वों का बोध कराती है।

भूहर्म्यपार्थिवसदाश्रयसंज्ञकश्च, वृत्तत्रयेन्दुसुकलाकृतिरूपसिद्धौ।

दिन्नागचक्रमनुकोणदशारचक्रा, संस्थापितास्तु गजकोणनिवासपूर्वे ॥१७॥

सबों को आश्रय देने वाले पृथ्वीतत्व से सम्बंधित भूपुर चक्र, त्रिवृत्तक चक्र, इन्दुकलाओं की संख्या (चन्द्रमा की अमासहित सोलह कलाएं हैं) वाले रूप को धारण करने वाला षोडशार चक्र, दिग्गजों की संख्या (आठ) वाला अष्टारचक्र, मनुओं की संख्या (चौदह) वाला (कोणात्मक) चतुर्दशार चक्र, इसके बाद दशारचक्र (दश कोणात्मक चक्र दो हैं, बहिर्दशार एवं अन्तर्दशार। सृष्टिक्रम के अंतर्गत भूपुर से बिंदु की ओर पहले पड़ने वाले चक्र को बहिर्दशार एवं बाद वाले को अन्तर्दशार कहते हैं), ये सभी (आठवें) अष्टकोणचक्र से पहले (श्रीचक्र) में संस्थापित रहते हैं।

यस्मिन्त्रिकोणमगतिस्तिलपर्णिरम्यः, संसारचक्रपरिवर्तनतालुरेशः।

यस्मिन्स्थितस्तिमिततालितलोकबुद्धिस्तं नौमि तापननिभं परयन्त्रराजम् ॥१८॥

जिसमें चन्दन के समान रमणीय, अगम्य त्रिकोणात्मक चक्र है, जो संसारचक्र की निरंतर परिवर्तनशीलता के लिए महान् जलावर्त के समान है, जिसमें लोगों की बुद्धि को पाशबद्ध करने की शक्ति वाला स्थिर स्वभावयुक्त (बिंदु) तत्व भी है, उस सूर्य के समान तेजस्वी परदेवता सम्बन्धी यन्त्रराज को मैं प्रणाम करता हूँ।

शक्राग्निमृत्युपतिखड्गभुजाम्बुनिष्ठैराकाशगम्यधननायकरुद्रदेवैः ।

ब्रह्माहिराजपरिमण्डितभूपुराग्रे, त्वामुज्जिहानतरुणीमभियाचयामि ॥१९॥

इंद्र, अग्नि, यमराज, निर्ऋति, वरुण, वायु, कुबेर, रुद्र, ब्रह्मा एवं अनन्त के द्वारा जिसके (श्रीचक्र के) भूपुरबाह्य प्रदेश परिमण्डित हैं, जिसकी लावण्यता कभी मलिन नहीं होती, अपितु सर्वदा बढ़ती ही रहती है, ऐसी तुम्हारे प्रति मैं नम्र निवेदन करता हूँ।

आद्या महोज्ज्वलनिभा ह्यपरा सुरक्ता, चान्त्यासिता शिवशिवाकृतिरूपकाख्याः ।

पञ्चोनसंख्यकप्रवेशयुतोऽस्ति रम्यो, भूर्लोकभूपुररथाङ्गयुते नमस्ते ॥२० ॥

तीनों रेखाएं अलग अलग वर्ण की हैं। बाहर से प्रथम रेखा श्वेतवर्ण की है, और दूसरी रेखा सुंदर रक्तवर्ण की है। तीसरी रेखा कृष्णवर्ण वाली है तथा तीनों रेखाएं क्रमशः परमशिव, माया एवं स्थूलजगत् का रूपक प्रस्तुत करती हैं। चारों ओर से जिसमें प्रवेशद्वार बने हुए हैं, उस पृथ्वीतत्व सम्बन्धी मनोहर भूपुरचक्र से युक्त हे देवि ! मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ।

नानास्वरूपतनुलाकृतिडामराश्च, संहारतक्षणकलाधृतजम्बुहासाः ।

संस्थापितास्तु पयसाम्पतिद्वारमध्ये, योगिन्य एधितकुचा इलिकान्तवीर्याः ॥२१ ॥

विशाल आकृति वाली, अनेकों भयावह रूपों को धारण करने वाली योगिनियां, जिनके स्तन विस्तृत एवं बेडौल हैं, जो गीदड़ के समान गर्जना करने वाली, संहार एवं मारकाट में दक्ष हैं तथा जिनके पराक्रम में सम्पूर्ण भूमण्डल के विनाश की क्षमता है, वे (भूपुर के) पश्चिमवर्ती द्वार पर नियुक्त रहती हैं।

नीलाञ्जनाभसमदेहधरो करालः, शूलासिमानवकपालत्रिनेत्रयुक्तः ।

षड्बाहुसंयुतप्रशस्तिरपासुदक्षो, श्रीक्षेत्रपो विजयते पुरुहूतक्षेत्रे ॥२२ ॥

जो कराल देव नीलवर्ण के सुरमे के समान आभा वाले शरीर को धारण करते हैं, जो शूल, खड्ग, नरमुण्ड आदि को धारण करते हैं एवं त्रिनेत्र से युक्त हैं, जिनकी कीर्ति उनके छः भुजाओं से किये गए हिंसात्मक कर्मों से विस्तार को प्राप्त कर रही है, वे क्षेत्रपाल (भूपुर के) पूर्ववर्ती द्वार में सुशोभित हो रहे हैं।

पाशाङ्कुशौ परिदधन्सविशालतुण्डः, नीलाद्रिसन्निभकलेवरमावहञ्च ।

प्रश्चोतकश्च निगमान्तप्रसव्यहेतोः, याम्यां स्थितो स भगवान् गणनायकाख्यः ॥२३ ॥

हाथों में पाश और अङ्कुश धारण करके, विशाल सूंड़ से युक्त, नीले पर्वत के समान देह को धारण करते हुए, वेदविरुद्ध आचरण करने वालों को नष्ट करने वाले भगवान्, जिनका नाम गणनायक है, वे (भूपुर के) दक्षिणवर्ती द्वार में स्थित हैं।

इर्वारुतुल्यमथितास्तमसः पुमान्सः, डिम्भाहवापसनदक्षइनीशसाध्यः।

यस्योपमा न च भवेदुपसंयमस्य, स भैरवो प्रभसकीर्ति सदोत्तरेशः ॥२४॥

जो पापी जनों के शरीर को ककड़ी की भांति सरलता से विदीर्ण कर देते हैं, अधर्म के पक्ष से लड़ने वालों का संहार करने वाले पराक्रमियों के जो इष्टदेव हैं, जिनके प्रलयंकारी कर्मों की तुलना किसी से नहीं हो सकती, ऐसे प्रचण्ड कीर्ति वाले श्रीभैरवदेव (भूपुर के) उत्तरवर्ती द्वार के स्वामी हैं।

स्वर्णोर्मिकातरणिलज्जितसुप्रभाय, निःशेषसद्विषदसंशयनिर्दयाय।

तस्मै सुभद्रश्रवसे महते नमस्ते, यन्त्राय गाथश्रवसे परदेवतायाः ॥२५॥

जिनकी स्वर्णिम आभा से सूर्य भी लज्जित हो जाते हैं, जो सन्तों से वैर करने वाले सभी दुष्टों को निःसंदेह ही कठोर दण्ड देते हैं, जिनकी महान् कीर्ति सभी ओर व्याप्त है, उन वरेण्य स्तुतियों से स्तुत्य परदेवता के यन्त्र को मैं प्रणाम करता हूँ।

श्यामाननामसितवस्त्रसमावृताञ्च, नीलाश्वपृष्ठगतरक्तमृणालनेत्राम्।

नैर्ऋत्यकोणपरिधौ पशुमोहदक्षां, नौमीड्यरूपकुशलाञ्च तिरस्करीशाम् ॥२६॥

जो श्यामवर्ण के मुख वाली हैं, नीले वस्त्रों को धारण करती हैं, नीले रंग के घोड़े पर सवार हैं और रक्तवर्ण के कमल के समान जिनके नेत्र हैं, पशुओं को मोहित करने में निपुण, प्रशंसनीय रूप को धारण करने वाली तिरस्करी नाम वाली देवी, जो नैर्ऋत्यकोण में निवास करती हैं, उन्हें मैं प्रणाम करता हूँ (तंत्रमार्ग में भय, घृणा, लज्जा, जुगुप्सा, जात्यभिमान आदि अष्टपाशों का वर्णन है, उनसे आबद्ध जीवसामान्यों की पशु संज्ञा है)।

श्यामाङ्गखेटकरथाङ्गकृपाणहस्तां, स्मेराननामतुलरत्नविचित्रभूषाम्।

आग्नेयकोणपरिमण्डितचन्द्रचूडां, दुर्गामरण्यभवनां सततं स्मरामि ॥२७॥

श्यामवर्ण के अङ्गों से युक्त, हाथों में ढाल, चक्र तथा तलवार को धारण करने वाली, प्रसन्नमुखी, अतुल्य और विचित्र रत्नों से बने आभूषणों से युक्त, आग्नेयकोण में स्थित रहने वाली, मस्तक पर चन्द्रमा को धारण करने वाली वनदुर्गा को मैं सदैव स्मरण करता रहता हूँ।

शम्भोः रुषा ज्वलितदेहधरो रतीशः, प्राप्तुं परिष्कृततनुं शरणञ्च देव्याः।

लब्ध्वा पुनश्च सविलासनशक्तिदेहं, ईशानसंस्थितप्रकर्षविहारदक्षः ॥२८॥

शिव जी के क्रोध से भस्मीभूत हुए देह को पुनः सुनिर्मित रूप में प्राप्त करने के लिए रतिपति कामदेव श्रीदेवी के शरण में गए थे और उन्होंने पुनः रमणकारिणी शक्तियों से युक्त नवीन देह को प्राप्त भी किया, ऐसे उत्कृष्ट विहार में दक्ष कामदेव श्रीचक्रराज के ईशानकोण में स्थित रहते हैं।

श्रीशारदीयद्विजराजविशिष्टशुभ्रमिच्छावतीयुवतिसङ्घनियुद्धहेतुम् ।

सौगन्धवर्षणमनोज्ञज्वराभिधानं, वायव्यसंस्थितवसन्तमनुश्रयामि ॥२९॥

जिनकी उज्ज्वलता और ऐश्वर्य शरत्कालीन चन्द्रमा से भी अधिक है, जो रमणोत्सुका युवतियों के मध्य (प्रणयसम्बद्ध) द्वंद्व का कारण बन जाते हैं, जो सौरभिक वातावरण का निर्माण करते हुए कामजन्य ज्वर को बढ़ाते हैं, ऐसे वायव्यकोणस्थित वसन्त की मैं सेवा करता हूँ।

शुभ्रौ महाम्बुतनयौ निधिसंज्ञकौ चापाचीप्रवेशपरिबृंहितकुब्जकेशी ।

यक्षेशद्वारविभवाश्रितसिद्धलक्ष्मीः, श्रीचक्रराजभवने सकला नियुक्ताः ॥३०॥

जो निधिकुल के सदस्य हैं एवं दिव्य जल की संतान हैं (शंख एवं पद्म नामक निधियां), श्रीचक्र के पश्चिम दिशा की द्वारनायिका कुब्जकेशी हैं, तथा यक्षराज कुबेर के द्वार (उत्तरवर्ती द्वार) की नायिका सिद्धलक्ष्मी हैं, ये सभी श्रीचक्रराज के भवन में (यथावर्णित स्थानों में) नियुक्त हैं।

यन्मायया निरयणाश्रितनिष्कधर्ता, निर्याचने निबधिताड़ननिर्भजेच्छुः ।

भूत्वा प्रतिष्कनिवदन्यमना तथेट्टे, तामुन्मनीमुदयद्वारगतां नमामि ॥३१॥

जिसकी माया से मोहित होकर इस संसारचक्र में फंसे हुए बड़े बड़े धनी भी अवसादग्रस्त होकर इससे छूटने के लिए अपने मस्तक को पीटने लगते हैं, आत्मबल को त्याग कर संघर्ष का मार्ग छोड़ देते हैं और अंत में स्तुति करने लगते हैं, उस पूर्वद्वार की नायिका उन्मनी को मैं प्रणाम करता हूँ।

निर्णीतस्वर्गद्रुपदां दिवि धावमानां, सद्भक्तपूजितपदां बलिदातिवाराम् ।

निर्हस्तमृत्युमपवादनदक्षिणेशीं, श्रीकालिकान्घ्रिशरणं नियतं सदेरे ॥३२॥

जो सम्पूर्ण स्वर्गलोक को अपने चरणों के नीचे रखती हैं, महाकाश में विचरण करती हैं, जिनके चरण सद्भक्तों के द्वारा पूजित हैं एवं जो भावपूर्वक दी गयी बलि को स्नेहयुक्त होकर स्वीकार करती हैं, दुर्बल जनों की मृत्यु को टालने में समर्थ, दक्षिणवर्ती द्वार की नायिका, उन कालिका के चरणों की शरण में मैं अपनी दृढ़ गति को स्थापित करता हूँ।

आद्याणिमा च गरिमा लघिमा तथैव, सिद्धिप्रदा च महिमा जगति प्रसिद्धा ।

ईशित्वसिद्धियुतभूतिवशित्वनामा, प्राकाम्यसर्वखचितेप्सितप्राप्तिकाम्याः ॥३३॥

एता समस्तविभवा सकलार्थसिद्धिसाहाय्यसन्निधियुता समहान्कुशाब्जाः ।

रेखाङ्कगूढ़नियमा रविभासमानास्तिष्ठन्ति भुक्तिमतयस्तव भूपुरेऽस्मिन् ॥३४॥

सबसे पहले अणिमा, गरिमा और लघिमा, सबों को सिद्धि देने वाली जगत्प्रसिद्ध महिमा, ईशित्व सिद्धि के साथ वशित्व नाम की सिद्धि, प्राकाम्य, सर्वभुक्ति, इच्छा तथा प्राप्ति नाम वाली समस्त सिद्धियां सर्वार्थसिद्धि नामक सिद्धि के

साथ अपने हाथों में पाश एवं कमल धारण किये हुए, सूर्य के समान वर्ण वाली होकर सबों की इच्छाओं को पूर्ण करने की इच्छा से तुम्हारे इस भूपुर की रेखाओं में गूढ़भाव से निवास करती हैं।

चक्षुष्मती चिकितुषी विकला जरूथा, व्राधन्तमा विकसुकोज्ज्वलरश्मियुक्ता।

ब्रह्माण्डजल्गुलप्रिया गिरिमाणवीना, हे चक्षदाननिपुणे ! तव नाममाल्यः ॥३५॥

तुम सम्पूर्ण संसार की सभी गतिविधियों को देखने वाली हो, सभी बातों को जानने वाली हो, तुम गुणातीत भाव में लीन रहने वाली, सबों को अपनी इच्छा मात्र से नष्ट करने वाली, नित्य वृद्धि को प्राप्त होने वाली, विशेषरूप से प्रकाशमान् रहने वाली विराट् ऊर्जा की रश्मियों से युक्त हो। आप सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड जिनका घर है, ऐसे सर्वव्यापी ब्रह्म की प्रिया और पर्वतराज की बालिका के समान हैं (वैसे तो जगज्जननी हैं किंतु लीलापूर्वक हिमालयपुत्री पार्वती के रूप में अवतार लिया)। हे शासन करने में समर्थ देवि ! उपर्युक्त सभी शब्द आपकी नाममाला के अंश हैं।

सञ्चक्षथीरधपराक्रमव्रातसाहे, रक्षाम्मियेध्यवरदा तुविमन्युधीरा।

विश्वन्मिवा प्रणतकष्टविखादनिष्ठा, त्वां विश्ववारगृहिणीमनिशं भजामि ॥३६॥

हे शासकों के भी शासकों के पराक्रमतुल्य समूहों को नष्ट करने में समर्थ देवि ! हमारी रक्षा करो। तुम यज्ञों के माध्यम से तुम्हारा यजन करने वाले जनों को अभीष्ट वरदान देती हो। तुम अत्यन्त क्रोध एवं ज्ञान से परिपूर्ण हो। तुम ही सारे जगत् को चलाने वाली गतिशील शक्ति एवं अपने शरणागतों के कष्ट को छिन्न भिन्न करने के स्वभाव वाली हो, जो संसार की अनेकों प्रकार से रचना करने वाले परमेश्वर की अर्द्धाङ्गिनी हैं, ऐसी तुम्हारी मैं निरंतर सेवा करता हूँ।

पञ्चान् सुपञ्चक्षितिजानुभये रभिष्ठा, रम्जासि दुर्मदजनानचितानचक्रान्।

धर्मक्षयंकरनिकारणहेतुमुख्या, मक्षुङ्गमा वसुधिती रशनायमाना ॥३७॥

हे देवि ! अपने धन को भोग प्रधान पापों या विलासों में लगाने वाले विलासी जनों को, चाहे वो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र अथवा निषाद ही क्यों न हो, उसे धर्म और अधर्म के भ्रम में उलझा कर रखती हो, साथ ही मोहबुद्धि वाले अकर्मण्यता से ग्रस्त अहंकारी जनों के ऊपर नियंत्रण रखती हो। जो धर्म की हानि करते हैं, उन्हें तुम बारम्बार नारकीय योनियों में भ्रमण कराती हो, अत्यन्त वेग से संचरण करने वाली हो, आकाश एवं पृथ्वी के रूप में पदार्थों को धारण करती हो एवं तुम्हारी परम्परा, तुम्हारा शासन अनादि एवं प्राचीनतम है।

विभ्रान्तविम्बटवियातव्यवायसूर्णाः, आजौ विमातृफणितल्पगचक्रभुक्ताः।

पश्चादपीशहृदयेश्वरि विप्रलापे, सम्मोहितास्तव विमानवराटबद्धाः ॥३८॥

अत्यन्त भ्रम के कारण, राई के समान लघु कलेवर एवं लघु पराक्रम को प्राप्त, फिर भी धूर्तता को न त्यागने वाले लोग, जिनके शरीर क्षत विक्षत होकर युद्धभूमि में अपनी सौतेली माता से उत्पन्न सर्प पर सोने वाले (अथवा सर्प पर सोने वाले, अपने सौतेले भाई) के चक्र के आहार बन जाते हैं, अर्थात् मारे जाते हैं। उसके बाद भी उनकी बुद्धि निर्मल नहीं होती, क्योंकि हे शिव जी के हृदय की स्वामिनी ! तुम्हारे अपमान के कारण उत्पन्न मोहपाश में बंधे उन

(असुरों) का मन सदैव सम्मोहित होकर आपसी झगड़ों में ही लगा रहता है। (कश्यप जी की दिति नाम वाली पत्नी से दैत्यों की उत्पत्ति हुई है, कद्रू नाम की पत्नी से शेषनाग की एवं वामनावतार के समान भगवान् विष्णु ने अदिति नाम की पत्नी से अवतार लिया, अतएव भगवान् अनंत एवं श्रीहरि, दोनों ही दैत्यों के सौतेले भाई के समान हैं)

त्वत्प्रेमजन्यमिहिराणकराग्रलीलासंक्षोभकारणपयोधरवर्कराटम्।

दृष्ट्वान्तकाग्निदहनोत्सुकधावमाना, माहिष्यशुम्भवृकदुर्गमभण्डसंज्ञाः ॥३९॥

तुम्हारे प्रेम के कारण मथित चित्त वाले शिव जी के हाथों की लीला से जन्य स्तनों में आलोकित नखक्षत को देखकर साक्षात् कालरूपी अग्नि में भस्म हो जाने की इच्छा लिए हुए महिषासुर, शुम्भ, भस्मासुर, दुर्गम और भण्डासुर जैसे अनेकानेक दैत्य कूद पड़े।

काकछदेक्षणविदग्धविदग्धकामः, स्मृत्वा हिरण्यकशिपूर्मिधरां त्वदीयाम्।

तेपेऽसितांचलगिरौ भवदीयकामो, जाने न कामदहनेन विशिष्टलाभम् ॥४० ॥

आपको स्वर्णाभा से युक्त कलेवर और वस्त्रों में देखकर तथा आपके खंजन पक्षी के समान नेत्रों से सञ्चालित प्रेमपूर्ण कटाक्ष से कामदेव का दहन करने वाले शिव जी स्वयं ही कामदग्ध हो गए। इस प्रकार बार बार आपका चिंतन करके उन्होंने आपको प्राप्त करने की कामना से नीलांचल पर्वत में तपस्या की। अतएव कामदेव को दग्ध करके उन्हें कौन से विशिष्ट लाभ की प्राप्ति हुई, यह मैं नहीं जान पाता। (यह स्थान कामाख्या पीठ में कामेश्वर महादेव की गुफा के नाम से प्रसिद्ध है तथा इस घटना का वर्णन कालिका उपपुराण एवं महाभागवताख्य देवी उपपुराण में मिलता है)

श्येनीपती भुवनशेरभशेव्यशेवा, शुष्मिन्तमा शतदुरा खलु शूरपत्नी।

श्रुष्टीवरी शिशुमती शिशुमाररूपा, रक्षोहणा भवतु लोमशवक्षणेशा ॥४१ ॥

हे देवि ! तुम विविध वर्णों की स्वामिनी प्रकृति हो, तुम संसार को नष्ट करने वाले परमेश्वर की कल्याणमयी प्रिया हो, तुम्हारा ताप और तेज समस्त जनों से अधिक है, तुम ही सैकड़ों आवरणों वाली शक्ति हो और निश्चित ही तुम शूरवीर पुरुषों का पालन करने वाली हो। तुम अपने भक्तों के लिए सुखदायिनी हो, संसाररूपी सन्तान की माता और धर्मोल्लंघन करने वाले शत्रुओं को मारने वाली हो (अथवा सभी नक्षत्र एवं ग्रहों में व्याप्त हो), पार्श्वभाग में सुंदर क्षुद्र रोमावली से युक्त नायिकाओं की स्वामिनी, हे देवि ! तुम हमारे लिए रक्षा करने वाली बनो।

वांछामनोज्ञलिबुजा भुवि मेनकाख्या, शग्धि युधानविजये युतके तथैव।

वोचे द्युभक्तदयिते ! तव पाशबद्धः, नामानि श्रीरिति महीति तथेश्वरीति ॥४२ ॥

मन में उत्पन्न समस्त इच्छाओं को पूरा करने के लिए तुम कल्पवल्ली के समान हो, संसार में मेनका, इस नाम से तुम्हारी प्रसिद्धि है (जिसकी बात सभी मानें, उस विद्वानों की सभाशक्ति को मेनका कहते हैं), तुम वीरों के मध्य युद्ध एवं सन्धि कराने में समर्थ हो। अनन्तकाल तक उपभोग किये जाने वाले दिव्य ऐश्वर्य से युक्त हे देवि ! तुम्हारे मायापाश में बद्ध हुआ मैं, तुम्हारे श्री, महा, ईश्वरी आदि संज्ञाओं से युक्त नामों का उच्चारण करता हूँ।

वेश्यानिषेवणरतेन सदा सुसेव्या, चंचूर्यते च असती कुलटा तथैव।

देवीमहो न भजतीह कुले निमग्नां, सत्तापरिष्कृतनिभां खलु वेश्यदात्रीम् ॥४३ ॥

वेश्यारमण में रत रहने वाले लोगों के लिए पातिव्रत्य से रहित कुलटा ही सदैव सेवनीया एवं गमनीया है। अहो ! (आगमशास्त्र में वर्णित) कुल में निमग्न रहने वाली (कुलार्णव तन्त्र के अनुसार कुण्डलिनी शक्ति की कुल संज्ञा है, उसमें रहने वाली गूढ़भावगत कुलटा), किसी की भी सत्ता से निर्मुक्त रहने वाली (षडाम्नाय तन्त्र के अनुसार किसी के भी शासन से परे गूढ़भावगत असती) और निश्चय ही मोक्ष देने वाली (महानिर्वाण तन्त्र के अनुसार वेश्य, अर्थात् मोक्ष देने वाली शक्ति ही गूढ़भावगत वेश्या है) देवी की उपासना क्यों नहीं करते ?

शिक्षानरस्तपति वाजजितः पुमांसस्तैर्वाजयन्त वृषमण्यव एतदेव।

येषामहो न मनसीति वसोः कबन्धे ! संस्थापितस्तु सुभगे ! तव सुप्रवासः ॥४४ ॥

हे जीवनीय शक्ति को धारण करने वाली ज्ञानमयी सुन्दरि ! जिनके मन में तुम्हारा स्थायी निवास नहीं है, (जो आपके चिन्तन मनन से रहित हैं) उनके द्वारा बड़े बड़े आचार्यजन भी अत्यन्त कष्ट पाते रहते हैं, विकराल संग्रामों को जीतने वाले योद्धागणों एवं निरंतर साधना में लीन योगिजनों की भी यही गति होती है (वे भी उसके द्वारा कष्ट पाते रहते हैं, अर्थात् आपके चिन्तन से रहित व्यक्ति सदैव अधर्म ही करता है)।

त्वं वैष्णवी रदितमुण्डितरध्रचोदास्त्वं रन्धिचित्तपरमा महती वसूया।

त्वं मेधसातिविजया मृडयाकुजाया, त्वां विश्वमोहनकरीं शरणं प्रपद्ये ॥४५ ॥

तुम श्रीहरि की आत्मशक्ति हो (अथवा परस्पर एकता एवं संगति कारिणी राष्ट्रनीति रूप विशाल वाणी हो), तुम्हारे मधुर मुखमण्डल में भगवान् शिव के द्वारा उत्पन्न दन्तक्षत आलोकित हैं, तुम ऐश्वर्यवान् पुरुषों को भी प्रेरणा देने वाली और आगे आये बाधक हिंसक विघ्नों को दूर करने वाली हो। तुम ही परमतत्व की स्वामिनी, दयामयी एवं सबसे महान् हो। तुम ही प्राणशक्ति, प्रजाशक्ति, ऐश्वर्यशक्ति, एवं ब्रह्मचर्य का पालन करने वालों के लिए उत्तम लोकों में निवास के कामना की प्रेरिका हो। तुम संग्रामों में सदैव अपराजित रहती हो, शिव जी की अत्यंत प्रिय भार्या हो, ऐसी विश्व को सम्मोहित करने वाली, तुम्हारी मैं शरण ग्रहण करता हूँ।

अग्रेगमादिपुरुषं तु मदीयमीक्षे, मर्माविधस्तु भृतिहीन इहेह मल्बः।

ईक्षे च देव्यमिनती स्वयमेवकर्त्रि ! आण्डीकलोकनिलये ! महदण्डगर्भे ! ॥४६ ॥

सभी तत्वों के नायक (चौबीसों तत्व का नायक आत्मा है) जो आदिपुरुष है, ऐसे मेरे आत्मा को मैं (तुम्हारे मायापाश के कारण) क्षत विक्षत देखता हूँ, इसी शरीर में संसाधनहीन और मलिन स्वभाव वाला देखता हूँ। हे कमलों से बने लोक में निवास करने वाली ! हे ब्रह्माण्ड को अपने उदर में धारण करने वाली ! हे स्वयं से ही स्वयं का प्राकट्य करने वाली ! अब तुम ही मेरी स्वामिनी हो, मेरा विनाश न होने देती हुई मेरी रक्षा करो।

लोके सुशिष्टिसुषदे ! वृषणा सबन्धू, रूपाणि सन्ति युवयोः वृषनाभिधर्ता।

वेदाननो वृषभवाहन इंद्रसंज्ञा, अन्ये सुमारुतवृषाकपयस्तथैव ॥४७ ॥

हे उत्तम शासन करने वाली एवं शरणागतों को सुख देने वाली ! तुम्हारे दोनों रूप (ब्रह्म और प्रकृति) आपस में श्रेष्ठ आचरण करने वाले शाश्वत दम्पति हैं, बलवान् संतानों के सेचक हैं, इस संसार में तुम्हारे ही रूप प्रतिभासित होते हैं, चाहे वो दृढ़ चक्र को धारण करने वाले विष्णु के रूप में हो, वेदों को प्रकाशित करने वाले ब्रह्मा अथवा नंदीश्वर पर आरूढ़ होने वाले महादेव के रूप में हो। इनके अतिरिक्त भी इन्द्रादि अन्य सभी उत्तम वीरों के गण, जो इस जगत् को संचालित करते हैं, उनमें भी तुम ही प्रकाशित होती हो।

उड्डीशडामरकुलागमशास्त्रमुख्यैराराधिता हरिहरात्मकसूत्रसंघैः।

ब्रह्माख्यसूत्रनिजशक्तिसुदर्शनेन, सम्पादिता निखिलविश्वप्रसूरनिन्द्ये ॥४८ ॥

उड्डीश, डामर और कुलागम के मुख्य शास्त्रों के द्वारा, शिवसूत्र एवं विष्णुसूत्रसमूहों के द्वारा तुम्हारी आराधना की गई है। हे अनिन्द्ये ! हे सम्पूर्ण संसार को उत्पन्न करने वाली ! शक्तिदर्शन सूत्र, जिसे ब्रह्मसूत्र भी कहते हैं, उसके द्वारा तुम्हारे रूप का प्रतिपादन किया गया है।

श्रीनाथवक्त्रपरिनिर्गतस्वात्मसूत्रे, प्रेमाप्लुते तु त्रिपुरागमप्रेमसूत्रे।

सर्वादिकान्तनिधने तव चित्रवर्णाः, आनन्दवर्णमभयंकरमीयमानाः ॥४९ ॥

श्रीनाथ के मुख ने निकले हुए आत्मसूत्र में, त्रिपुरातन्त्रराजरूपी प्रेमपूर्ण प्रेमसूत्र में, यहां तक कि सबों की उत्पत्ति से लेकर अन्त तक में तुम्हारे ही अद्भुत चरित्र, वे आनन्दरूप और अभयदायक स्वरूप में मापे जाने योग्य हैं।

शक्तिब्रह्ममुकुन्दरुद्रकथिते सद्यामले योपने, सद्रूपे त्रिगुणात्मके रघुगतौ सामे सुगानान्विते।

रौद्रे यो रजसस्पतिः सुकथितस्त्वां तेन सन्धानितां, यो जानाति वरिष्ठवर्चिपुरुषः विवृत्तकः रण्यवाक् ॥५० ॥

शक्ति, ब्रह्म, विष्णु एवं रुद्र प्रोक्त सर्व मोहनकारी सात्विक यामलसंज्ञक ग्रंथों में क्रमशः आत्मतत्व के वर्णन में, त्रिगुणात्मक विकार के प्रसङ्ग में, सुन्दर गान से युक्त धीमी गति से युक्त साम ऋचाओं में, रुद्रयामल आदि में भी जिसे समस्त लोकों के पालक के नाम से कहा गया है, उस (परब्रह्म) के साथ जो आपको नित्य जुड़ा हुआ जानता है, (शिव और शक्ति के मध्य अभेद देखता है) वही श्रेष्ठ तेजस्विता वाला है, वही संसार की घटनाओं को नियंत्रित करने की सिद्धि से युक्त होता है, वही तत्वज्ञानी पुरुष है।

॥ इति श्रीभागवतानंद गुरुणा विरचिता श्रीत्रिपुराम्बाशाम्भवीमहाप्रपत्तिः सम्पूर्णा ॥

॥ इस प्रकार श्रीभागवतानंद गुरु के द्वारा रची गयी श्रीत्रिपुराम्बाशाम्भवीमहाप्रपत्ति पूरी हुई ॥